Review Of Research
Vol. 4 | Issue. 5 | Feb. 2015
Impact Factor : 3.1402 (UIF)
ISSN:-2249-894X
Available online at www.lbp.world

ORIGINAL ARTICLE

आजाद हिन्द फौज का भारतीय स्वतंत्रता संघर्ष में योगदान

राजीव कुमार
शोधार्थी इतिहास विभाग, कुरूक्षेत्र विश्वविद्यालय, कुरूक्षेत्र.

प्रस्तावना :

जिस समय भारत में भारत–छोड़ो आन्दोंलन चल रहा था उसी समय नेताजी ने आजाद हिन्द फौज की कमान अपने हाथ में ली और कमान लेने के बाद अक्तूबर 1943 में ही अस्थाई सरकार के प्रधानमंत्री सुभाष चन्द्र बोस ने ब्रिटेन और संयुक्त राज्य अमेरिका के खिलाफ युद्व की घोषणा कर दी ।[1] उन्होनें आजाद हिन्द फौज का पुर्नगठन करते हुए इसमें विभिन्न विभाग बनाए। भर्ती के पश्चात् प्रशिक्षण के लिए सैन्य ट्रेनिंग स्कूलों की स्थापना की। इन स्कूलों का कार्य मोर्चो पर भेजने से पहले सैनिकों और अफसरों को एक अच्छा सैन्य प्रशिक्षण देना था। लगभग सारे पूर्व एशिया में आई. एन. ए. की शाखाएं खोगी गई।[2] नेताजी ब्रिटिश साम्राज्य के विरूद्व सैनिक और जनक्रान्ति करना चाहते थे। उनकी रणनीति थी कि जब यह फौज भारतीय सीमा पर लड़ेगी तो उसी समय भारतीय जनता व ब्रिटिश सेना के भारतीय सैनिक भी विद्रोह कर दें। इसी उद्देश्य से उन्होंने एक गुप्तचर सेना भी बनाने की योजना बनाई जो आई. एन. ए. क लिए जानकारी एकत्रित करती तथा भारत में आम जनता को विद्रोह के लिए तेयार करती। इसलिए पेगांन के ग्रीन लाईन रोड़ पर स्थित 'फ्री स्कूल बिल्डिंग' में एन. राघवन की अध्यक्षता में एक संस्था का निर्माण किया गया। इस संस्था का नाम 'स्वराज संस्थान' रखा गया।[3] यह संस्था जापानी प्रभाव से मुक्त थी। यह जापानी सरकार से केवल वित्तिय व सैन्य सहायता प्राप्त करती थी न कि आदेश। युद्व के संचालन के लिए 'वार काउंसिल का भी गठन किया गया था।[4]

आजाद हिन्द फौज के सैनिकों की ट्रेनिंग के पश्चात उन्हें रंगून में इक्टठा किया गया। इन सैनिकों की चार गुरिला रेजीमेण्टें बनाई गई जिनका नाम 'सुभाष बिग्रेड', 'गांधी बिग्रेड' व 'आजाद बिग्रेड' रखा गया था। इसी समय जनवरी 1944 के प्रथम सप्ताह में ही आजाद हिन्द फौज का हैडक्वार्टर सिंगापुर से रंगून में स्थानान्तरित कर दिया गया था।[5]

यह उल्लेखनीय है कि अब तक जापान पूर्व एशिया के अनेक देशों के साथ–साथ बर्मा को भी जीत चुका था। ब्रिटेन बर्मा को पुनः प्राप्त करने के लिए बैचेन था। अक्तूबर 1942 में भारत के वायसराय वावेल ने चीन को एक सैन्य योजना के लिए सहमत कर लिया था। 1943 के शुरू में मित्र राष्ट्रों ने उत्तरी बर्मा और अक्यूबा के लिए दो कम्पनियों की नियुक्ति की। उन्होनें अरकान और मयीतकयीना को पुनः प्राप्त करने का फैसला किया और 1944 के शुरू में चिडवीन नदी की तरफ कूच किया।[6] 'मित्र राष्ट्रों के इन प्रयासों के चलते पर जापान के कब्जे को खतरा हो गया था। जापान ने अपने साम्राज्य के जिस सुरक्षा घेरे का निर्माण किया गया था, उसमें बर्मा महत्वपूर्ण था। इसलिए जापान ने भी आगे बढ़कर इम्फाल और कोहिमा पर कब्जा करने की योजना बनाई। इसका उद्देश्य इम्फाल और कोहिमा की भौगोलिक स्थितियों का फायदा उठाना था। ताकि कम से कम सेना व धन खर्च करके बर्मा को सुरक्षा प्रदान की जा सके। इसका उद्देश्य भारत पर रणनीतिक दबाव बनाना भी था।[7] जापानी सेना के जनरल काताकुरा ने सुभाष बोस और शाहनवाज खाँ के साथ एक गुप्त बैठक की। उन्होनें धरावली लड़ाई के साथ–साथ कलकता पर हवाई बमवारी करने की योजना रखी। इस योजना का नेताजी ने विरोध किया। बोस की योजना अरकान क्षेत्र पर हमला करते हुए चिटगांव पर कब्जा करने की थी।[8]

7 फरवरी 1944 को 'सुभाष ब्रिगेड' जिसका नेतृत्व कमाण्डर शाहनवाज खाँ कर रहे थे, को अरकान क्षेत्र में लड़ने का हुक्म मिला। इसे दो मोर्चो में बांट दिया गया था। प्रथम बटालियन को कहा गया कि वे मेजर रातूरी की

कमान में कलादान घाटी में लड़ेगी तथा दूसरी व तीसरी बटालियनें मेजर रणसिहं और पदम सिहं की कमान में माडले से हाका और फालम के पहाड़ी इलाकों में जाएगी।

इस तरह 'सुभाष ब्रिगेड़' की प्रथम बटालियन रगूंन से परोमा रवाना हुई।[9] इसने कालादन नदी से दुश्मन को खदेड़ कर पश्चिम की तरफ भगा दिया और 40 मील उत्तर में पलटेवा और डलेटमे पर अपना अधिकार कर लिया। यहां से करीब 40 मील पश्चिम की ओर हिन्दुस्तान की सरहद दिखाई देती थी। सैनिक आराम किये बिना हिन्दुस्तान की जमीन पर पहुंच कर अपना राष्ट्रीय झण्डा फहराना चाहते थे। यहां सबसे पास की ब्रिटिश चौकी मेडाक में थी। मेजर रातूरी ने रात के समय इस पर धावा बोल कर इसे भी जीत लिया। हिन्दुस्तान की सर जमीन पर आजाद हिन्द फौज के सिपाहियों द्वारा पैर रखने का नजारा बहुत ही हृदय–स्पर्शी था। सिपाहियों ने लेटकर मातृभूमि की उस पवित्र जमीन को चूमा जिसे आजाद करवाने वे आये थे। उन्होंने यहां तिरंगा झण्डा फहराया और आजाद हिन्द फौज का कौमी गीत गाया। कप्तान सूरजमल की कमान में एक कम्पनी मेडाक में छोड़ दी गई जो मई से सितम्बर 1944 तक वहां रही। बाद में इम्फाल की लड़ाई में नाकामयाबी मिलने के बाद उन्हें रगूंन लौटने का हुक्म हुआ।[10]

उधर 'सुभाष बिग्रेड' की दूसरी व तीसरी बटालियनें मांडले पहुंची। यहां पर मौजूद जापानी कमाण्डर आजाद हिन्द फौज के सैनिकों को युद्व के अभियान में शामिल नहीं करना चाहते थे। इसलिए जब शाहनवाज खाँ जापानी कमाण्डर जनरल मुटागुची से कूच करने का आदेश लेने गये तो उसने उन्हें हाका फालम की सुरक्षा कहने का आदेश दिया। यदि शाहनवाज खाँ अपनी सेना के साथ यहां रहते तो उन्हें युद्व के बारे में पता नहीं चलता। इसलिए उन्होनें इस आदेश का विरोध किया। परन्तु रसद काट दिए जाने की धमकी से उन्हें इस आदेश को मानना पड़ा। फलतः उन्होनें हाका फालम की ओर से बढ़ते हुए इम्फाल की तरफ कूच करने की सोची।[11]

कमाण्डर शाहनवाज खाँ के नेतृत्व में आई. एन. ए. की यह बटालियन तामू के रास्ते जंगलों से झाड़ियां काटकर रास्ता बनाती हुई हाका पहुंची। तत्पश्चात् हाका से फालम होते हुए यह पलेल तक जा पहुंची। यहां कुछ समय रूककर सुबह 4 बजे उन्हें इम्फाल पर हमला करना था। परन्तु दिन के 3 बजे ही उनकी इस फौज पर हवाई हमला हो गया जिसमें बहुत से सैनिक मारे गये तथा जख्मी हो गये। बचे हुए सैनिक के साथ शाहनवाज खाँ चिन पहाड़ी क्षेत्रों से होते हुए कोहिमा पहुंचे। इन कठिन भौगोलिक स्थितियों में न तो उनके पास रसद का समान था और न ही दवाईयां थी। आई. एन. ए. के इन सैनिकों को सिर्फ एक ही बात से संतोष था कि वे भारतीय भूमि पर लड़ रहे थे।[12]

इस समय 'गांधी बिग्रेड़' जिसका नेतृत्व कर्नल आई. जे. कियानी कर रहे थे, को अप्रैल 1994 में इम्फाल की लड़ाई में हिस्सा लेने का ओदश दिया गया। इसने इम्फाल में दुश्मन के हवाई अड्डे पर हमला कर उसे जीत लिया। इसके पश्चात् कोहिमा पर भी अपना कब्जा कर लिया।[13] परन्तु इस समय जुलाई तक यह स्पष्ट हो चुका था कि विश्व युद्व में धुरी शक्तियों समेत जापान असफल हो चुका है। दिमापुर पर कब्जा करने का मौका वे चूक गये थे। ब्रिटिश वायु सेना की बमबारी के कारण जापानी व आजाद हिन्द सेना के पैर उखड़ गये थे।

'आजाद बिग्रेड' जिसके गुलजारा सिहं थे, मई 1944 के मध्य मे तामू पहुँचकर 'सुभाष बिग्रेड़' से जा मिली। इस फौज को पलेल के आस–पास की अंग्रेजी फौज पर जोरदार छापा मारने का आदेश मिला था। इसने अपनी कार्यवाही शुरू की और अपने अड्डे तैयार किये। परन्तु बारिश होने के कारण यह भी अपने उद्देश्यों को पूरा न कर सकी। इसे भी पीछे हटना पड़ा।

दिसम्बर 1944 में आजाद हिन्द फौज की ' नेहरू बिग्रेड' जी. एस. ढिल्लन के नेतृत्व में मिंग्यान पहुंची। जनवरी 1945 के अन्त में मेजर ढिल्लन को शत्रु की हलचली के सम्बन्ध में यह खबर मिली की एक अंग्रेजी डिवीजन ने मलाया के पास इरावदी नदी पर मिनबू के आस–पास पुल व चौकियां बना ली है। शीघ्र ही मेजर ढिल्लन अपने सैनिकों के साथ वहां पगान पहुंचे। नदी के किनारे आई. एन. ए. के जवान शत्रु के खिलाफ बहादुरी से लड़े। परन्तु शत्रु की शक्ति ने यह साफ कर दिया था कि इस युद्व का अन्त उनके पक्ष में नहीं होगा।[14] अतः 'नेहरू बिग्रेड' की दूसरी पैदल रेजीमेण्ट को कर्नल प्रेम कुमार सहगल की कमान में परोम तथा क्यौकयादांग के रास्ते पोपा जाने का आदेश मिला ताकि पोपा पहुंच गये वे तुरन्त ही मोर्चाबन्दी करवाने लग गये। कुछ समय बाद मेजर ढिल्लन भी न्यानगू से पीछे हट गये। पोपा में दोनों रेजीमेण्ट मिल गई। कर्नल शाहनवाज खाँ भी पोपा में आ गये। उन्होनें इस समूची डिवीजन की कमान को अपने हाथों में ले लिया और इसे कई पलटनों में बांट दिया। ये पल्टने पिनबिन, सीकटीन, लेगी आदि स्थानों पर शत्रु के खिलाफ लड़ी।[15]

परन्तु अप्रैल 1945 तक स्थिति तेजी से धुरी राष्ट्रों के विरूद्व होती गई। हिटलर द्वारा आत्महत्या करने के बाद जर्मनी ने बिना शर्त' मित्र देशों' के सामने आत्म समर्पण कर दिया था। अंग्रेजों द्वारा भारी बम वर्षा के कारण जापान का पतन भी समीप था। शीघ्र ही अंग्रेजी फौज के सिंगापुर तथा बैंकाक में उतरने के साथ ही आजाद हिन्द फौज सिपाहियों को पकड़ कर रगूंन की जेलों में डाला जाने लगा। कुछ समय पश्चात् उन्हें कलकता लाया गया। सैनिकों द्वारा अनुरोध करने पर नेताजी ने आत्म–समर्पण नहीं किया। वे हवाई जहाज द्वारा वियतनाम होते हुए

फार्मोसी पहुंचे। यहां से टोकियों जाते समय उनका जहाज दुर्घनाग्रस्त हो गया जिसमें नेताजी की मृत्यु हो गई।[16] आजाद हिन्द फौज के सैनिकों जिन्हें रगूंन से कलकता लाया गया था,उनके साथ बहुत खराब बर्ताव किया गया उनके कमाण्डरों के खिलाफ देशद्रोह का मुकद्मा चलाकर फांसी की सजा तक दे दी गई। देश की जनता ने इस सजा का विरोध किया तथा आन्दोंलन चलाने की चेतावनी दी जिससे ब्रिटीश सरकार ने डरकर उनकी फांसी की सजा माफ कर दी। इस प्रकार आजाद हिन्द फौज ने देश की जनता के दिलों में अपनी जगह बनाई और भारतीय स्वतंत्रता संघर्ष में अपना काफी योगदान दिया। जिससे आगे चलकर देश को आजादी मिली।

संन्दर्भ–ग्रन्थ सूची

1. मेजर जनरल शाहनवाज खाँ, नेताजी और आजाद हिन्द फौज, सत्यधर्म प्रकाशन, 2007, पृ. 55.
2. Subhas Chandra Bose, Indian pilgrims, (1897-92) Asia Publishing House, New Delhi, 1965, p. 46.
3. M.L. Bhargava, Indian National Army: Tokyo Cadelt, Reliance Publication House, New Delhi, 1986, p. 74.
4. Subhash Chandra Bose, The Indian Struggle 1920-42, Bombay, 1964, p. 85.
5. Bhulabhari Desai, J.I.N.A Defense, Congress Publication Board, Bombay, 1947, p. 95.
6. Sube Singh : I.N.A files, No. 13/75-97/HAD, p. 45.
7. T.R. Sareen, Indian National Army: A Documentary Study. Vol. 5, Gyan Publishing House, New Delhi, 2004, p.65.
8. Moti Lal Bhargave, Netaji Subhas Chandra Bose in south East Asia, Vishvidya Publishers, New Delhi, 1986, p.89.
9. Ibid p.154.
10. L.P. Sharma, Indian National Movement Agara, 1996, p. 160.
11. Harkirat Singh, The I.N.A Trial and the Raj, Atlantic Publisher, New Delhi, 2003.p. 64
12. Ibid, p. 95.
13. I.N.A. file no: 13/75-97/H.D.A (Hissar Divisonal Archives)
14. अग्रवाल, बाल मुकुद, आजादी के मुकदमें, नेशनल बुक ट्रस्ट ऑफ इण्डिया, नई दिल्ली, पृ.35.
15. आर. एल. शुक्ल, आधुनिक भारत का इतिहास, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली, 2003, पृ.75.
16. शाहनवाज खाँ, पूर्व उद्वरित पृ. 132–136.